

भारत में अनुवाद की परम्परा

कौर, हरजिंदर

सहायक प्रोफेसर, खालसा कॉलेज ऑफ एजुकेशन रंजीत एवेन्यू अमृतसर (पंजाब)

शोध सार

यह अध्ययन भारत में अनुवाद की प्राचीन परंपरा की खोज करता है, तथा वैदिक और उपनिषद काल से लेकर आधुनिक काल तक इसके विकास का पता लगाता है। यह विभिन्न भारतीय भाषाओं और उससे परे भाषाई और सांस्कृतिक आदान-प्रदान को बढ़ावा देने में अनुवाद की महत्वपूर्ण भूमिका पर प्रकाश डालता है। अध्ययन अनुवाद गतिविधियों की गतिशील प्रकृति और भारतीय समाज पर उनके प्रभाव पर प्रकाश डालता है। वैदिक और उपनिषद अनुवाद आध्यात्मिक और दार्शनिक विचारों को फैलाने में सहायक थे, जबकि बौद्ध और जैन अनुवादों ने धार्मिक शिक्षाओं को आम जनता तक पहुँचाया। मुगल काल में महत्वपूर्ण अंतर-सांस्कृतिक आदान-प्रदान हुए, जिसमें संस्कृत, फ़ारसी और अरबी के बीच अनुवाद ने साहित्यिक और वैज्ञानिक परिदृश्य को समृद्ध किया। औपनिवेशिक काल के दौरान, भारतीय भाषाओं और अंग्रेजी के बीच अनुवाद ने पूर्व और पश्चिम के बीच ज्ञान के आदान-प्रदान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

बीज शब्द: प्राचीन भारतीय अनुवाद, वैदिक काल, मुगल अनुवाद, औपनिवेशिक काल के अनुवाद, आधुनिक भारतीय अनुवाद, भाषाई आदान-प्रदान

मूल आलेख: भाषा मानव सभ्यता का एक मूलभूत पहलू है, और इसका विकास संस्कृति के साथ जुड़ा हुआ है। अनुवाद इस समस्या का समाधान है, जिससे एक भाषा को दूसरी भाषा द्वारा समझा जा सकता है। अनुवाद ने लोगों के जीवन में महत्वपूर्ण योगदान दिया है, संस्कृतियों और भौगोलिक क्षेत्रों के बीच की बाधाओं को तोड़ दिया

है। संस्कृत में 'अनुवाद' शब्द का अर्थ है 'दोहराया गया कथन', और इसकी उत्पत्ति 'वाद' मूल से हुई है, जिसका अर्थ है 'बोलना'। भारत जैसे देशों में, जहाँ कई भाषाओं का उपयोग किया जाता है, अनुवाद एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अनुवाद की प्रक्रिया कई चरणों से होकर गुजरती है, जिसमें लिप्यंतरण और ट्रांसक्रिप्शन शामिल

हैं। लिप्यंतरण में शब्द-दर-शब्द, वाक्यांश-दर-वाक्यांश या वाक्य-दर-वाक्य शामिल होता है, स्रोत पाठ के अर्थों को पुनः प्रस्तुत करना और लक्ष्य भाषा के पाठकों पर तत्काल प्रभाव डालना। ट्रांसक्रिप्शन अनुवादक को स्रोत पाठ को लक्ष्य भाषा में पुनर्निर्मित रूप में प्रस्तुत करने की अनुमति देता है।

भारतीय अनुवाद की परंपरा प्राचीन काल से चली आ रही है, वैदिक संहिताओं को विश्व पुस्तकालय की सबसे पुरानी रचना माना जाता है। स्थान और जाति के अंतर के कारण मनुष्यों के बीच भाषा के अंतर स्पष्ट थे। संस्कृत ग्रंथों का चीनी, तिब्बती और अरबी भाषाओं में अनुवाद प्रसिद्ध है, साथ ही वैज्ञानिक संस्कृत ग्रंथों का चीनी और तिति भाषाओं में अनुवाद भी प्रसिद्ध है। गणित, ज्योतिष और आयुर्वेद की पुस्तकें ग्रीक भाषा में लिखी गईं और आधुनिक यूरोप में उपलब्ध हो गईं। साहित्यिक अनुवाद भी प्राचीन काल से ही हैं, गाथा सप्तशती जैसी कृतियाँ, जो मूल रूप से प्राकृत रचना थी, का संस्कृत और बाद में अरबी में अनुवाद किया गया। इसके कारण वेदों, पुराणों, कविताओं और नाटकों का हिंदी सहित भारत की आधुनिक भाषाओं में अनुवाद हुआ। जैन साहित्य में भी कई अनुवादित ग्रंथ थे, जिनमें पंचतंत्र का पहलवी और अरबी में अनुवाद किया गया था। मुगल काल में, सम्राट

अकबर ने प्राचीन ग्रंथों का अरबी और फ़ारसी में अनुवाद करने के लिए एक स्वतंत्र ब्यूरो की स्थापना की, जिसमें रामायण, महाभारत और गीता का फ़ारसी में अनुवाद किया गया। शाह के बेटे शाहजादा दाराशिकोह ने 52 उपनिषदों का फ़ारसी में अनुवाद किया, जिसका नाम था 'अमहयज्ञ'। आधुनिक युग में, लगभग सभी वैदिक साहित्य का तमिल, तेलुगु, मराठी, अंग्रेजी, फ्रेंच, जर्मन, ग्रीक, फ़ारसी, डेनिश और अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद किया गया है। प्राचीन भारतीय अनुवादकों का उद्देश्य केवल प्रसिद्धि, धन या शुभता प्राप्त करना नहीं था, बल्कि अपने पाठकों को विभिन्न भाषाओं की रचनाओं से परिचित कराना और उन्हें ज्ञान की एक नई प्रेरणा देना था। प्राचीन भारतीय अनुवाद परम्परा

विद्वानों के मतानुसार प्राचीन भारतीय अनुवाद परम्परा के अंतर्गत अनुवाद चिंतन भारत में अनुपलब्ध बताया गया है। किन्तु सत्य यह है कि ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में भारत प्राचीन काल में विश्व में अग्रणी रहा है। भारत के विचारकों ने विश्व में उपलब्ध सभी विद्याओं के नवीन ज्ञान का अनुवाद करने के स्थान पर उन्हें आत्मसात करके भारतीय परम्परा के साथ मौलिक रूप में प्रस्तुत करना अधिक श्रेयस्कर मन है। प्राचीन काल में भारतीय विचारकों की जीवन-पद्धति पाश्चात्य विद्वानों की

भाँति अपने कार्यों का व्यवस्थित सिद्धांतीकरण करने की नहीं थी। जिन उदाहरणों से पाश्चात्य अनुवाद-चिंतन की परम्परा को व्यवस्थित बताया जा रहा है, ऐसे अनुवाद हमारे देश में वेदों की रचना के तुरन्त बाद ही होने लगे थे। जैसे ब्राह्मण, आरण्यक, निघंटु और निरुक्त इसके उदाहरण हैं। यह सत्य है कि जिस प्रकार भारत के ग्रन्थों का अनुवाद अरब या चीन या अन्य स्थानों के लोगों ने किया, उस प्रकार भारत के लोगों ने उस काल में अन्य देशों के ग्रन्थों का अनुवाद नहीं किया। इधर हमारी भाषा प्रणाली में इतना परिवर्तन हुआ कि अपने ही ग्रंथों के अनुवाद और व्याख्या की आवश्यकता पड़ी। निघंटु और निरुक्त के अलावा बाद के दिनों में जब शास्त्रीय संस्कृत का प्रचलन हुआ, तब ऋषियों और तपस्वियों ने अपने शिष्यों को शिक्षा देते समय जिस तरह प्राचीन ग्रंथों की व्याख्या की, उसे भी अनुवाद की दृष्टि से देखा जाना चाहिए, जिसमें एक ओर पद्य को गद्य के रूप में व्याख्यायित किया जाता था, तो दूसरी ओर उसके सरल अर्थ भी होते थे। यह समझना चाहिए कि आधुनिक काल में भाषा-भाष्य ग्रंथ का सूत्र वहीं से मिला होगा।

ऐसा माना जाता है कि भारत में अनुवाद की प्रथा “बिना नाम या शैली के” प्रचलित रही है। आलोचक श्री खुबचंदानी हिंदू पौराणिक कथाओं

के एक पात्र “नारद” को “अंतरसांस्कृतिक परिवेश में एक व्याख्याकार” का पहला उदाहरण मानते हैं। वे एक अन्य धार्मिक व्यक्ति यानी बुद्ध का भी उल्लेख करते हैं जिन्होंने संदेश दिए। सुजीत मुखर्जी का मानना है कि भारत में अनुवाद मुख्य भाषा संस्कृत से हिंदी, बांग्ला और गुजराती जैसी अन्य आधुनिक भाषाओं (भाषाओं) में हुआ। पश्चिम के विपरीत, जहाँ अनुवाद की उत्पत्ति बाइबिल के कार्यों से हुई, भारत में स्रोत भाषा के ग्रंथ वेदों जैसे धार्मिक ग्रंथ नहीं थे, बल्कि मिथक और “रामायण”, “महाभारत” और “श्रीमद्भगवद्गीता” जैसी प्रसिद्ध काव्य रचनाएँ थीं। उन्नीसवीं शताब्दी तक हमारा साहित्य केवल साहित्यिक कृतियों के अनुवाद, रूपांतरण, व्याख्या और पुनर्कथन तथा ज्ञान-ग्रंथों तक ही सीमित था: चिकित्सा, खगोल विज्ञान, धातु विज्ञान, यात्रा, जहाज निर्माण, वास्तुकला, दर्शन, धर्म और काव्यशास्त्र पर संस्कृत, पाली, प्राकृत, फारसी और अरबी से प्रवचन। इनसे हमारा सांस्कृतिक परिदृश्य जीवंत रहा और दुनिया के बारे में हमारी जागरूकता लंबे समय तक समृद्ध रही। हमारे अधिकांश प्राचीन लेखक बहुभाषी थे: कालिदास की शकुंतला में संस्कृत और प्राकृत है; विद्यापति, कबीर, मीराबाई, गुरु नानक, नामदेव और अन्य कवियों ने एक से अधिक भाषाओं में अपने गीत और कविताएँ रची

थीं। अनुवाद के माध्यम से ही पंचतंत्र की कहानियाँ पश्चिम की ओर ईसप की दंतकथाओं के रूप में फिर से प्रकट हुईं और विभिन्न देशों और भाषाओं की कहानियों को आसानी से रूपांतरित और संक्षिप्त किया जा सका। उदाहरण के लिए हंस क्रिश्चियन एंडरसन की कहानियाँ अंग्रेजी से भारतीय क्षेत्रीय भाषाओं में। अगर हम इतिहास पर नज़र डालें तो पाते हैं कि भारत में मुगल काल के दौरान अनुवाद का ध्यान संस्कृत से हटकर “फ़ारसी” पर चला गया, जो “शासक की भाषा” थी। बादशाह अकबर ने फ़ारसी को संरक्षण दिया और रामायण, महाभारत जैसे महान महाकाव्यों और कई अन्य कृतियों का फ़ारसी में अनुवाद करवाया। भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी के आने के बाद, भारतीय भाषाओं का यूरोपीय भाषाओं में अनुवाद लोकप्रिय हो गया। चार्ल्स विल्किंस ने 1785 में पहली बार “भगवद् गीता” का संस्कृत से सीधे अंग्रेज़ी में अनुवाद किया। हालाँकि अंग्रेज़ी के आक्रमण के बावजूद, भारतीय भाषाओं की अपनी अलग पहचान और समृद्ध साहित्यिक परंपराएँ थीं, हालाँकि अंग्रेज़ों ने भारतीय भाषाओं में अनुवाद गतिविधि को बढ़ावा देने के लिए कोई बड़ी पहल नहीं की। स्वतंत्रता आंदोलन और राष्ट्रवादी मिज़ाज के परिणामस्वरूप बंकिम चंद्र का बंगाली में और प्रेमचंद का हिंदी में अनुवाद हुआ। कई यूरोपीय

ग्रंथों का भी संस्कृत, बंगाली और अन्य स्थानीय भाषाओं में अनुवाद किया गया। इस अवधि के दौरान अनुवाद सांस्कृतिक पहचान और मूल स्व की अभिव्यक्ति अधिक थी। इस अवधि के प्रमुख लेखक जैसे ए.के. रामानुजन, दिलीप चित्रे, सुजीत मुखर्जी ने अनुवाद को क्षेत्रीय/स्थानीय और लोकतांत्रिक दृष्टिकोण से संस्कृति और राष्ट्र की ओर देखा।

मुगल शासन के दौरान, शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण थी, जिसमें अनुवाद की भूमिका महत्वपूर्ण थी। मस्जिदों में 'मकतब' प्रणाली ने लड़कों और लड़कियों के लिए प्राथमिक शिक्षा प्रदान की, जबकि 'शुहरते आम' विभाग ने स्कूल और कॉलेज बनवाए। ईरानी प्रवासियों ने भारतीय विद्वानों के साथ बातचीत के माध्यम से भारतीय शैली, सबक-ए-हिंदी विकसित की। अकबर, एक प्रमुख धर्मत्यागी, सभी धर्मों को मिलाने की अपनी प्रवृत्ति के लिए जाना जाता था और उसने एक अनुवाद विभाग की स्थापना की। फ़ारसी आधिकारिक भाषा थी, जिसके कारण इस समय के दौरान समृद्ध साहित्य का निर्माण हुआ। हिंदी, संस्कृत और उर्दू भी काफी विकसित हुईं। इस अवधि के उल्लेखनीय कार्यों में बाबर का बाबरनामा, तारीख-ए-रशीदी, कानून-ए-हुमायूं, हुमायूंनामा, तज़किरत-उल-वक्रत, वक्रत-ए-मुश्तकी, तोहफ़ा-

ए-अकबरशाही और तारीख-ए-शाही शामिल हैं। अकबर ने हिंदी साहित्य को संरक्षण दिया और सुंदर कविराय, सेनापति, कवि रत्नाकर, कविंद्र आचार्य और केशवदास जैसे महान कवियों को जन्म दिया। उन्होंने एक अलग अनुवाद विभाग की स्थापना की, जो संस्कृत, अरबी, तुर्की और ग्रीक भाषाओं से फ़ारसी में अनुवाद करता था। फ़ारसी मुगलों की आधिकारिक भाषा थी, जिसमें महाभारत, रामायण, ताजक, अथर्ववेद, पंचतंत्र, कालिया दमन, राजतरंगिणी, लीलावती, भागवत पुराण, नलदमयंती, सिंहासन बत्तीसी, तुजुक-ए-बाबरी, हयात-उल-हयवान, योगवासिष्ठ और अल्लोपनिषद जैसी कृतियों का फ़ारसी में अनुवाद किया गया। अकबर ने फ़ारसी में भी कविताएँ लिखीं, जिन्हें फ़ारसी कविता की भारतीय ग्रीष्म ऋतु कहा जाता है। दिल्ली सल्तनत काल के दौरान जन्मी उर्दू ने बाद के मुगल सम्राटों के दौरान एक भाषा के रूप में महत्व प्राप्त किया। अमीर खुसरो उर्दू को अपनी कविता के माध्यम के रूप में इस्तेमाल करने वाले पहले विद्वान कवि थे, और मुहम्मद शाह ने उर्दू कविता में उनके योगदान के लिए कवि शम्सुद्दीन वली को सम्मानित किया। भारत में औपनिवेशिक काल के दौरान, अनुवाद कार्य ने राष्ट्र की कल्पना और धारणा के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। विदेशियों के अनुवाद

अभियान अपवित्र थे, जो भारतीय साहित्य, संस्कृति, रीति-रिवाजों, खान-पान, व्यवहार, उत्सव और आचरण को समझकर शासन करने का आसान तरीका तलाश रहे थे। हालाँकि, देशभक्ति से ओतप्रोत भारतीय ऋषियों ने विरासत के विरूपण को मनोबल बढ़ाने के विचार के साथ संतुलित करते हुए महत्वपूर्ण अनुवाद किए। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान, राष्ट्रीय पहचान के विकास के लिए स्थानीय भाषाओं में अनुवाद के महत्व पर ठीक से चर्चा नहीं की गई है। अनुवाद तीन प्रकार के थे: अंग्रेजी ग्रंथों का विभिन्न भारतीय भाषाओं में अनुवाद, आधुनिक भारतीय भाषाओं में संस्कृत ग्रंथों का अनुवाद और आधुनिक भारतीय भाषाओं में कार्यों का पारस्परिक अनुवाद। इन अनुवादों द्वारा बनाई गई भारत की पहचान और छवि एकांतप्रिय और नकलची थी, जिससे राष्ट्रवाद की यूरोकेंद्रित प्रकृति को बढ़ावा मिला।

उत्तर-औपनिवेशिक काल में, स्रोत और लक्ष्य ग्रंथों के बीच संबंधों को फिर से बनाने और फिर से खोजने की आवश्यकता उभरी। टैगोर की कविता "गीतांजलि" अंग्रेजी अनुवाद में भारतीय साहित्य में एक मील का पत्थर थी, और सर विलियम जोन्स और अभिज्ञान शाकुंतलम द्वारा शुरू किया गया अंग्रेजी अनुवाद का कार्य एक प्राच्यवादी उद्यम था। भारतीय अनुवादकों ने देश को राष्ट्रवाद और

राष्ट्र की अवधारणाओं से जोड़ने के लिए अनुवाद को एक उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया। स्वतंत्रता के बाद के युग में अनुवाद लोकप्रिय हो गया, सिद्धांतकार पी. लाल ने "ट्रांसक्रिएशन" नामक एक नई अनुवाद पद्धति की कल्पना की। एक भारतीय भाषा से दूसरी भाषा में और भारतीय भाषाओं से अंग्रेजी में अनुवाद किए गए। अंग्रेजी में अनुवाद गतिविधि में तेजी वैश्वीकरण का संकेत था, जिसने भाषाओं और संस्कृतियों के बीच कृत्रिम बाधाओं को तोड़ दिया। हाल के वर्षों में, मैकमिलन, पेंगुइन और कथा जैसे प्रमुख प्रकाशन गृहों ने अंग्रेजी में गुणवत्तापूर्ण अनुवाद प्रकाशित करने के साथ, प्रकाशन और विपणन अनुवाद पर अधिक ध्यान दिया है। अनुवाद के विभिन्न रूप होते हैं, जिनमें साहित्यिक, वैज्ञानिक और तकनीकी अनुवाद शामिल हैं। भारत सरकार ने साहित्यिक और आलोचनात्मक कृतियों के बड़े पैमाने पर अनुवाद को प्रोत्साहित करने के लिए एक नया मिशन, भारतीय साहित्य विदेश (ILA) शुरू किया है। भारत में, अनुवाद जीवन का एक अपरिहार्य तरीका है, जिसमें संरचनावाद, विखंडन, मनोविश्लेषण, लिंग और उत्तर-औपनिवेशिक प्रवचन के सिद्धांतों की आलोचनात्मक जांच की जाती है।

पिछले तीस वर्षों में पश्चिम की तरह ही भारत में भी अनुवाद सिद्धांत विकसित हुए हैं और इस संदर्भ में दो प्रसिद्ध सिद्धांतकार उल्लेखनीय हैं गायत्री चक्रवर्ती स्पिवक और हरीश त्रिवेदी। स्पिवक ने जैक्स डेरिडा का फ्रेंच से और महाश्वेता देवी का बंगाली से अंग्रेजी में अनुवाद किया। उन्होंने स्पष्ट रूप से "भाषा के उपयोग की एक उत्तर-संस्कृतिवादी अवधारणा को रेखांकित किया"। त्रिवेदी अनुवाद को एक उत्तर-औपनिवेशिक प्रयोग के रूप में देखते हैं जो प्रकृति में अंतःविषय है। स्पिवक और त्रिवेदी के अलावा, अन्य अनुवादक भी हैं जिनमें तेजस्विनी निरंजना और रीता कोठारी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रशंसित हैं। निरंजना एक उत्तर-उपनिवेशवादी की तरह मानती हैं कि अनुवादित पाठ को "सांस्कृतिक आदान-प्रदान के तरीकों में समकालीन कठिनाई" दिखाने के लिए पाठ को बाधित करना चाहिए। भारत में अनुवाद परंपरा की समीक्षा करते हुए, अनुवाद सिद्धांतकारों ने महसूस किया है कि अनुवाद एक कठिन कार्य है और "किसी अन्य भाषा में पाठ को फिर से लिखना शायद उसका अनुवाद करने से कहीं अधिक आसान है"। अनुवाद को अब अलगाव में की जाने वाली भाषाई गतिविधि के रूप में नहीं देखा जाता है, बल्कि एक व्यापक सांस्कृतिक संदर्भ के उत्पाद के रूप में

देखा जाता है, जिसमें बहुलवादी विश्वास प्रणाली शामिल है। आंद्रे लेफेब्रे इस रुख को अपनाने वाले पहले सिद्धांतकारों में से एक थे। उनके अनुसार, "अनुवाद का अध्ययन सत्ता और संरक्षण, विचारधारा और काव्यशास्त्र के संबंध में किया जाना चाहिए, जिसमें मौजूदा विचारधारा या मौजूदा काव्यशास्त्र को मजबूत करने या कमजोर करने के विभिन्न प्रयासों पर जोर दिया जाना चाहिए"। वह कहते हैं कि इसका अध्ययन उस भाषा और पाठ के संदर्भ में किया जाना चाहिए जिसका अनुवाद किया जा रहा है, इसके अलावा क्यों, कैसे और कौन अनुवाद करता है जैसे सवाल पर भी ध्यान देना चाहिए। वे आगे कहते हैं: "इस तरह से देखा जाए तो अनुवाद को उन रणनीतियों में से एक के रूप में अध्ययन किया जा सकता है, जो संस्कृतियाँ अपनी सीमाओं के बाहर की चीज़ों से निपटने और ऐसा करते हुए अपने स्वयं के चरित्र को बनाए रखने के लिए विकसित करती हैं - ऐसी रणनीति जो अंततः परिवर्तन और अस्तित्व के दायरे से संबंधित है, शब्दकोशों और व्याकरणों में नहीं"। 1980 के दशक के वैश्वीकरण चरण में, बाजार के विस्तार के साथ, मध्यम वर्ग से पाठकों का एक वर्ग उभरा जो अंग्रेजी भाषा में सहज था। अनुवाद अध्ययन के अनुशासन को गंभीरता से लिया जाने लगा और इसके सिद्धांत और व्यवहार में रुचि

लगातार बढ़ती गई। एक बार सीमांत गतिविधि के रूप में माना जाने वाला अनुवाद अध्ययन इस प्रकार मानव आदान-प्रदान की एक वैश्विक कला के रूप में उभरा और 1990 के दशक में यह पूरी दुनिया में एक बढ़ी हुई प्रथा बन गई।

अनुवाद अंतर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक संबंधों और कूटनीति का एक महत्वपूर्ण पहलू है, जो हमें अपने राष्ट्र के शुभचिंतकों की राय को समझने और उस पर प्रतिक्रिया करने में सक्षम बनाता है। प्रशासन, पत्राचार, न्यायपालिका, शिक्षा, धर्म, अनुसंधान, विज्ञान, प्रौद्योगिकी, फिल्म, जनसंचार, साहित्य-कला-संस्कृति, भाषा शिक्षण, कूटनीति और रक्षा जैसे विभिन्न क्षेत्रों में इसका महत्वपूर्ण योगदान रहा है। हालांकि, अनुवाद की संवेदनशीलता बढ़ी है, खासकर भारतीय संदर्भ में, जहां वैचारिक संघर्ष सूक्ष्म हो गए हैं और छवियों और प्रतीकों का उपयोग इतना हावी हो गया है कि छोटे-छोटे कथनों का अर्थ महत्वपूर्ण हो गया है। द्वितीय विश्व युद्ध और भारत की स्वतंत्रता के बाद शिक्षा और देशों के बीच आपसी संबंधों में अनुवाद का महत्व काफी बढ़ गया। मराठी उपन्यासकार गंगाधर गाडगिल ने ब्रिटिश शासन के दौरान समाज के शैक्षिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक विकास में अनुवाद की भूमिका पर प्रकाश डाला। अनुवादकों ने भारतीय संस्कृति, धार्मिक और

दार्शनिक पृष्ठभूमि को समझने के लिए पवित्र ग्रंथों का अनुवाद किया, जिससे उन्हें अपना मनोबल और समृद्धि बनाए रखने में मदद मिली। औद्योगिक क्रांति ने वैज्ञानिक योगदान के कारण विश्व मानचित्र को छोटा होते देखा, जिससे ज्ञान के अनेक विषयों का विकास हुआ, विषय विशेषज्ञता और बड़े पैमाने पर ज्ञान का आदान-प्रदान हुआ। विदेशी प्रतिभाओं को दिशा दी गई और अर्जित ज्ञान के माध्यम से कमाने की स्वतंत्रता बढ़ी। इन गतिविधियों के विकास के साथ अनुवाद का दायरा बढ़ा, लेकिन अनुवाद की प्राचीन पद्धति अप्रभावी लगने लगी। विषय संदर्भ के प्रति संवेदनशीलता बढ़ी, जिससे खतरनाक गलत व्याख्या की संभावना बढ़ गई। बहुभाषिकता और कूटनीति में अनुवाद आवश्यक और जिम्मेदारी से भरा हो गया है। यह शिक्षण विधियों में एक गंभीर प्रविष्टि बन गया है, जो शासन, संचार, सांस्कृतिक आदान-प्रदान, राष्ट्र-निर्माण, वाणिज्य, उद्योग-व्यापार, प्रबंधन, कला-साहित्य-संस्कृति और विचारों के आदान-प्रदान को प्रभावित करता है। भारत जैसे बहुभाषी, बहुसांस्कृतिक देशों में, इसका महत्व और भी विशेष हो गया है। निदा, न्यूमार्क और बाथगेट जैसे अनुवाद विचारकों ने विश्लेषण, समझ, समन्वय, संक्रमण और पुनर्गठन पर ध्यान केंद्रित करके बेहतर अनुवाद के लिए मील के

पत्थर स्थापित किए हैं। हालांकि, इन निर्णयों में सावधानी बरतना महत्वपूर्ण है, क्योंकि सिद्धांतकार अक्सर अपने विचारों को तोड़ते हैं और नए विचारों का प्रस्ताव करते हैं। भारतीय कृतियों का अनुवाद तब किया जाता है जब मूल भाषा की रचना लोगों को बहुत पसंद आती है और अन्य भाषाओं के लोग उसमें रुचि दिखाते हैं। सशक्त रचनाओं का अनुवाद इसलिए किया जाता है ताकि पाठक रचनाकार की भावनाओं को आसानी से समझ सकें। भारत में अनुवाद की प्रक्रिया को एक प्रमुख कला माना जाता है और अनुवादकों को कलाकार का दर्जा दिया जाता है। मैकमिलन और कथा जैसे प्रसिद्ध प्रकाशक बड़े पैमाने पर अनुवाद की प्रक्रिया को आगे बढ़ाते हैं, जिससे भारतीय अनुवादक रचनात्मक बनते हैं। भारत जैसे देश में भाषा, विचार, संस्कृति, रीति-रिवाज आदि को एक भाषा से दूसरी भाषा में जोड़ने के लिए अनुवाद सबसे महत्वपूर्ण स्तंभ है। अनुवाद के बिना भारतीयों के लिए वैश्विक स्तर पर संबंध स्थापित करना असंभव है। अतः अनुवाद अंतर्राष्ट्रीय सांस्कृतिक संबंधों और कूटनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, जिससे हम अपने राष्ट्र के शुभचिंतकों की राय को समझ पाते हैं और उसका जवाब दे पाते हैं।

निष्कर्ष

संस्कृत सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं की जननी है, लेकिन आज भारत में सैकड़ों भाषाएँ और बोलियाँ हैं, जिनमें से केवल बाईस को भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में स्वीकृति मिली है। प्रत्येक भाषा का अपना विशिष्ट वातावरण, व्यवहार शैली और संस्कृति है, और साहित्य उस क्षेत्र के जीवन के विचारों से सराबोर है। भारतीय नागरिक हमेशा से ज्ञान पर निर्भर रहे हैं, जिसमें ज्ञान-आधारित विषयों पर चर्चा होती है। धर्म, दर्शन, ज्योतिष, आयुर्वेद और गणित बौद्धिक परंपरा के मुख्य अध्ययन थे। आधुनिक भारतीय भाषाओं का विकास एक सतत प्रक्रिया रही है, जिसमें रचनात्मक साहित्य और ज्ञान के सभी संकायों में पुनर्कथन और पुनर्कथन की लंबी परंपरा रही है। आज भाषाओं और संस्कृतियों की विविधता, विज्ञान और प्रौद्योगिकी में प्रगति और कूटनीति और अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की बदलती प्रकृति के कारण अनुवाद की स्थिति बदल गई है। अनुवादकों और अनुवाद विचारकों को भाषाओं के बीच वैश्विक अंतर्संबंधों पर विचार करना चाहिए और अनुवाद के प्रत्येक रूप को समग्र रूप में समझना चाहिए। मशीन अनुवाद का गहन अध्ययन किया जा रहा है, लेकिन इसकी सीमाएँ हैं और इसका उपयोग केवल मूल ग्रंथों के लिए किया

जाना चाहिए। भ्रष्ट अनुवादों को सुधारने की तुलना में पुनः अनुवाद बेहतर है। भारतीय संदर्भ में, शब्दों के बहुत बड़े अर्थ और ध्वनियाँ होती हैं, और वक्ता के मानसिक और बौद्धिक स्तर, भाषा क्षेत्र के वातावरण, संस्कृति, भाषा संरचना, लोक प्रयोग और विषय निर्माण पर विचार किया जाना चाहिए। व्यावहारिक तरीकों के दौरान अर्जित अनुभव और निपुणता अनुवाद की भारतीय परंपरा को समझने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

संदर्भ

1. अमर सिंह वधान: अनुवाद एवं संस्कृति, अहमदाबाद, त्रिअर्ण प्रकाशन।
2. ओमप्रकाश सिंह: अनुवाद से संवाद, अहमदाबाद, जवानी प्रकाशन।
3. नागेन्द्र: अनुवाद विज्ञान, हिंदी माध्यम कार्यवय निदेशालय, दिल्ली, दिल्ली विश्वविद्यालय।
4. भोलानाथ तिवारी: अनुवाद विज्ञान, दिल्ली, शब्दकार।
5. रीतारानी पालीवाल: अनुवाद की सामाजिक भूमिका, दिल्ली, सचिन प्रकाशन।
6. वामन शिवराम आप्टे: संस्कृत-हिंदी कोश, दिल्ली और वाराणसी, भारतीय विद्या प्रकाशन, 1999।

7. सुजीत मुखर्जी: खोज के रूप में अनुवाद, ओरिएंट लॉन्गमैन, हैदराबाद, 1994 1
8. सुसान बैसनेट और हरीश त्रिवेदी: उत्तर औपनिवेशिक अनुवाद: सिद्धांत और व्यवहार, लंदन, रूटलेज, 1999 1
9. सुसान बैसनेट: अनुवाद अध्ययन: 1980 संशोधित संस्करण, लंदन: रूटलेज, 1991 1
10. जे.बी.कैसाग्रांडे: अनुवाद के अंत, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ अमेरिकन लिंग्विस्टिक्स, पृ.335-340 1
11. बिजय कुमार दास: अनुवाद अध्ययन की पुस्तिका, नई दिल्ली: अटलांटिक, 2008 1
12. रीता कोठारी: ट्रांसलेटिंग इंडिया: द कल्चरल पॉलिटिक्स ऑफ इंग्लिश, यू.के., सेंट जेरोम्स, 2003, रेव, एड. दिल्ली, फाउंडेशन, 2006 1
13. सुजीत मुखर्जी: ट्रांसलेशन डिस्कवरी: और अंग्रेजी अनुवाद में भारतीय साहित्य पर अन्य निबंध, नई दिल्ली, एलाइड पब्लिशर्स नई दिल्ली, 1981 1
14. रमन प्रसाद सिन्हा: थ्योरी ईस्ट एंड वेस्ट: ट्रांसलेशन इन इट्स डिफरेंट कॉन्टेक्ट. ट्रांसलेशन,
15. तेजस्विनी निरंजना: सिटिंग ट्रांसलेशन: हिस्ट्री, पोस्ट-स्ट्रक्चरलिज्म एंड कोलोनियल

कॉन्टेक्ट, हैदराबाद: ओरिएंट लॉन्गमैन, 1955 1

Received on Aug 20, 2025

Accepted on Sep 25, 2025

Published on Oct 20, 2025

भारत में अनुवाद की परम्परा © 2025 by हरजिंदर कौर is licensed under [CC BY-NC-ND 4.0](https://creativecommons.org/licenses/by-nc-nd/4.0/)